स्तोत्र-साहित्य में वेदच्छाया

(शक्ति स्तोत्र के विशेष सन्दर्भ में)

डा. कमला पाण्डेय

प्रसिद्धान् वा सिद्धान् शिशु-तरुण-वृद्धानपि जनान्
उदारान् वा दारान् अनवरतमाराधन परान् ।
चिदानन्दात्मेयं भुवनजननी संविदमला
हरन्ती हृच्छल्यान् नयति किल कल्याणपदवीम् ॥[1]

त्रिभुवन-भवन-वितान में जो स्पन्दन मुकुलित है, जो संवेदन स्फुरित है, जो विभा उद्भासित है, जो आभा प्रकाशित है, वह चिदानंदात्मिका जगदम्बिका की ही प्रतिच्छाया है। अन्तरिक्ष के अनन्त विस्तार में, आदित्य के तेजोमय आलोक में, आकाश गङ्गा की प्रकाश लहरियों में, चन्द्रमा की रुचिर कलाओं में, टिमटिमाते नक्षत्रों की सुन्दरता में चित्शक्ति का ही तो प्रतिबिम्बन है। कुसुम कोरकों के पवित्र परिमल में, निर्झरों के झर-झर गान में, विहगों के कलकूजन में, तृण लता तरुओं की हरीतिमा में धारिणी की यही शक्ति तो ओतप्रोत है। सरीसृपों की सरसराहट में, पशुओं की अकुलाहट में, मनुष्यों की विवित्क्त चेतना में भगवती की करुणा ही प्रवाहित है। देवधुनी की सुधा धारा में, कालिंदी की कृष्णमयता में, अम्भोनिधि के उत्ताल तरङ्गों में आपोमयी का द्रवीभाव ही दृग्गोचर है।

वैदिक ऋषियों ने इसी चेतन शक्ति का साक्षात्कार परमेश्वर की आनन्दमयी चितिशक्ति के रूप में किया। उस अखण्ड आनन्द को स्फुरित करने वाली मातृशक्ति का अदिति के रूप में स्वागत हुआ।[2] वैदिक मन्त्रद्रष्टा ने देवताओं के माध्यम से प्रश्न किया—"काऽसि त्वं महादेवी ति" (हे महादेवी तुम कौन हो?) उत्तर मिला-"अहं ब्रह्मस्वरूपिणी"[3] (मैं ब्रह्मस्वरूप हूँ)। मैं रूद्रों वसुओं अदिति पुत्रों-सूर्य आदि देवताओं के साथ चलती हूँ अर्थात् ब्रह्माण्ड और ब्रह्माण्डगत समस्त जड़ चेतन के साथ मैं हूँ। प्रत्येक साकार देवताओं के साथ साकार स्त्रीरूप मैं ही हूँ। जड़ के साथ भी स्वातन्त्र्य कार्यशक्ति सूक्ष्म और स्तम्भित ज्ञानशक्ति मैं ही हूँ।'[4]

महादेवी ने कहा—मैं ही वसुओं में राज्य शक्ति अर्थात् स्वातन्त्र्य शक्ति संयमनी अर्थात् कार्यशक्ति चिकितुषी अर्थात् ज्ञान शक्ति हूँ। यज्ञादि में पूज्य ब्रह्मा विष्णु रुद्र सूर्य इन्द्र आदि विद्येश्वरों में पहली हूँ। पुरत्रा अर्थात् सबकी रक्षा करने वाली उस भगवती शक्ति स्वरूप ब्रह्म को देवता लोग विघेश्वर होकर भी विचित्र रचनामयी एवं विविध रूपों में स्थित समझते हैं।[5]

उपनिषदों ने ब्रह्म की इस आद्या शक्ति के उपर्युक्त तीन रूपों का भूयश:निरूपण किया है। यही चिन्तन धारा आगम और तन्त्र साहित्य में भी सतत प्रवाहमान है। 'स ऐक्षत'—उस परमात्मा ने सङ्कल्प लिया। यह भीतर की इच्छाशक्ति का केन्द्रीभाव है। 'सोऽकामयत'—अर्थात् इच्छा होने पर ज्ञान रूप वेग से 'तपसा अचीयत' अर्थात् तपस् से एकीभाव को प्राप्त हो गया।[6] ब्रह्म की तीसरी शक्ति क्रियाशील है। यह शक्ति सर्जन योग्य पदार्थों के नियमों में श्रद्धा उत्पन्न करती है। पृथ्वी आदि पांच तत्त्वों में भोग्य जगत् को प्रकट करती है। उसे भोगने के लिए करणों को प्रकट करती है अन्तर्मन को बहिर्मुख करके बाह्य क्रियायें कराती है। उसके सुख दु:खादि विविध फलों को प्रकट करती है।

इस मौलिक वैदिक चिन्तन को तन्त्रशास्त्र ने दूसरा नाम देकर समझाया है। इच्छा शक्ति को पर बिन्दु, ज्ञान शक्ति से अभिव्यक्त प्राण तत्त्व को अपराविन्दु तथा क्रिया शक्ति को नाद कहते हैं। जिस द्रव्य में उस नाद की लहर जागृत होती है उसे बीज कहते हैं। इन तीनों ज्ञान इच्छा क्रिया को वेदों में परब्रह्म की और शैवागमों में परम शिव की, वैष्णवागमों में

परात्पर राम एवं कृष्ण की स्वाभाविकी शक्ति माना गया है।[7] परब्रह्म के परविन्दु, अपर विन्दु, और उसके तीन विभागों को समझाने के लिये वेदवादियों ने प्रतीक की रचना की है जिसे त्रिपुर धाम कहते हैं। जैसे शिव का प्रतीक लिङ्ग है, विष्णु का प्रतीक शालिग्राम शिला है उसी प्रकार शक्ति का प्रतीक अथवा पूज्य आकृति सविन्दु त्रिकोण △ है। इस सम्पूर्ण आकृति की अधिष्ठाता देवता को वेदों-आगमों-तन्त्रों में त्रिपुरा कहते हैं। इस मूल प्रतीक का प्रस्तार श्रीचक्र है उसको समझाने वाली विद्या श्रीविद्या है।

छान्दोग्य उपनिषद् में पञ्चामृत विद्या का वर्णन है।[8] सूर्य मण्डल अपनी पूर्व पश्चिम उत्तर दक्षिण-चार दिशाओं की किरणों द्वारा ब्रह्माण्ड में मधुरस को फैलाता है। पूर्व दिशा की किरणें **ऋग्वेद** रूपी पुष्परस ग्रहण करती हैं, दक्षिण दिशा की किरणें **यजुर्वेद** के पुष्परस को, पश्चिम की **सामवेद** और उत्तर की **अथर्ववेद** रूपी पुष्प के रस को लेती हैं। विद्या रूपी अमृत या मधु के आधार पुष्प ऋग् यजुः साम अथर्व में अवस्थित हैं। उनके सार को भगवान् सूर्य अपने बिम्ब में खींचकर वसु-रुद्र-आदित्य-मरुत-इन देवताओं के गण क्रम से इन्द्र, अग्नि, वरुण, सोम-इन चार अध्यक्षों द्वारा मधुरस भोग कर तृप्त होते हैं। इन देवताओं के गण क्रम से इन्द्र, अग्नि, वरुण, सोम-इन चार अध्यक्षों द्वारा मधुरस भोग कर तृप्त होते हैं। इन चारों मुखों के रूपक वाले ब्रह्मदेव को चारों वेदों का प्रवर्तक माना जाता है। जो चारों वेदों में प्रकट आदेश है उसे निगम कहते हैं। पुनः ऋषि ने इस उपनिषद् में सूर्य के ऊर्ध्वमुख का वर्णन किया है। उसकी किरणें गुह्य आदेश को ब्रह्म तत्त्व रूपी पुष्प से खींचती हैं। इस गुह्य आदेश को आगम कहते हैं। आगमवादी इस ऊर्ध्वमुख परमेश्वर को शिव का पञ्चम मुख कहते हैं। ऊर्ध्व स्रोत द्वारा ब्रह्मविद्या चारों वेदों में ही समाप्त नहीं होती, अपितु देश काल निमित्तों के परिवर्तन से युग-युग में सिद्ध महात्मा उसे अपने तरीके से प्रकट करने के लिये धरा धाम में आते हैं।

वेद कर्मकाण्ड द्वारा स्वर्गादि साधनों एवं ज्ञान काण्ड द्वारा मोक्ष का प्रतिपादन करता है जब कि आगम भोगापवर्ग दोनों का समन्वित रूप है। आगम के विचार अथवा क्रिया पद्धति का जिसमें विस्तार से निरूपण है उसे तन्त्र कहते हैं। तन्त्र में पटल, पद्धति, कवच, सहस्रनाम और स्तोत्र-इन पांच अङ्गों का समावेश है। इससे स्वतः स्पष्ट है कि निगम की अन्तर्धारा आगम में और आगम की तन्त्र में है। अतएव तन्त्र के अङ्गभूत सम्पूर्ण स्तोत्रसाहित्य वेदमूलक हैं।

वेदों की यही अमूर्त चिन्तन धारा भगवती की शब्दमयी मूर्ति बन शक्ति स्तोत्रों में जीवन्त हो उठी है—

''तव च का किल न स्तुतिरम्बिके, सकल शब्दमयी किल ते तनुः ।''[9]

'निराकार'—''तनोतु क्षेमं नस्तव वदनसौन्दर्यलहरी''[10] के रूप में साकार हो उठा है। भगवती को सम्पूर्ण धर्मों की सर्जिका और वेदों की जननी, परब्रह्म महिषी के रूप में प्रतिष्ठा मिली—

विधात्री धर्माणां त्वमसि सकलाम्नाय-जननी
सतां मुक्तेर्बीजं त्वमसि परमब्रह्ममहिषी ॥[11]

'निर्गुण' दया दाक्षिण्यादि गुणों का आकार बन गया—

त्वया तु श्रीमत्या सदयमवलोक्योऽहमधुना ॥[12]
इदानीमौदास्यं यदि भजसि भागीरथी तदा ।
निराधारो हा! रोदिमि कथय केषामिह पुरः ॥[13]

'नीरस' मातृत्व से सरस हो उठा—

जगदम्ब विचित्रमत्र किं परिपूर्णा करुणाऽस्ति चेन्मयि ।
अपराधपरम्परा वृतं नहि माता समुपेक्षते सुतम् ॥[14]
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥[15]

'अशब्द' इस प्रकार शब्द करने लगा—

पादाम्बुजं भवतु जो विजयाय मञ्जु-मञ्जीर-शिञ्जित मनोहरमम्बिकायाः ॥[16]

यद् वा—

मुनीन्द्र वृन्दमानसे मरालिनीं महेश्वरीं
मिलिन्द-गुञ्जनानुकारि-मञ्जुशिञ्जिनीं नुमः ॥[17]

अव्यय नितनूतन स्वरूप धारण कर बहने लगा, असीम, अरूप और अचिन्त्य परिसीम की पकड़ में आ गया। निराकार नीराकार हो पिघलने लगा और कल-कल करता तन मन प्राणों में रस घोलने लगा- **''हीरवत्स्वच्छशीतोदकेपाहरन्ती झरी-निर्झरी-किङ्किणी-शिञ्जिते! कङ्कणक्वाणमिष्टस्वनानन्दिते! ऋग्यजुः सामवेदस्वरं श्रोतुकामेव भङ्ग-प्रघट्ट प्रभूतस्वरे! सुस्वरे भास्वरे!**[18]

वेद की यह अमृतधार आचार्य शङ्कर के हृदय गोमुख से इस प्रकार फूटी—

भागीरथि सुखदायिनि मातः! तव जलमहिमा निगमे ख्यातः ।[19]

अन्यत्र वे कहते हैं—

गङ्गे त्रैलोक्यसारे सकल सुरवधूधौत विस्तीर्णतोये
पूर्णब्रह्मस्वरूपे हरिचरणरजोहारिणी स्वर्गमार्गे ॥[20]

नर्मदा की स्तुति में आचार्य का वैदिक चिन्तन कितना स्फुट है देखिये इस स्तोत्र में—

गतं तदैव में भयं त्वदम्बु वीक्षितं यदा
मृकण्डुसूनु-शौनका-सुरारिसेवि सर्वदा ।
पुनर्भवाऽब्धिजन्मजं भवाब्धिदुःखवर्मदे
त्वदीय पादपङ्कजं नमामि देवि नर्मदे ॥[21]

आचार्य का प्रख्यात कनकधारा महालक्ष्मी स्तोत्र वेदोक्त श्रीसूक्त से अनुप्राणित है। सरसिज-निलये[22] इत्यादि श्लोक तो दोनों सूक्तों में एक समान है।

पूर्व विवेचित वेदानुप्राणित श्रीविद्या की स्तुति आचार्य शङ्कर के मीनाक्षी स्तोत्र में इस प्रकार विश्रुत है—

श्रीविद्यां शिववामभाग-निलयां ह्रींकार-मन्त्रोज्जलाम् ।
श्री चक्राङ्कित-विन्दुमध्य-वसतिं श्रीमत्सभा-नायिकाम् ॥[23]

इसी प्रकार त्रिपुरसुन्दरी वेदपादस्तोत्र में वेद मन्त्रात्मक पदों से छन्द परिपूर्ण हैं । यथा—

''भजे भवानीभवनावतंसमादित्यवर्णं तमसः परस्तात्'' आदि ।[24]

वेदों में प्रतिपादित 'रसो वै सः' को हितहरिवंश ने राधाविग्रह के रूप में इस प्रकार स्थापित किया है—

प्रत्यङ्गोच्छलदुज्ज्वलाऽमृतरस-प्रेमैक-पूर्णाम्बुधिः
लावण्यैक सुधानिधि र्गुरुकृपा-वात्सल्य-साराम्बुधिः ।
तारुण्य-प्रथम-प्रवेश-विलसन् माधुर्य-साम्राज्यभूः
गुप्तःकोऽपि महानिधिर्विजयते राधा रसैकावधिः ॥[25]

रसमयी राधा से रासेश्वर का अनुनय जयदेव की वाणी में ही सम्भव है—

प्रिये चारुशीले
मुञ्च मयि मानमनिदानम्
स्मर-गरल-खण्डनं मम शिरसि मण्डनम्
देहि पदपल्लवमुदारम् ।[26]

इसी प्रकार समस्त शरीरधारियों की उत्पत्ति पालन और संहार करने वाली आद्या शक्ति के रूप में श्री सीता जी का निरूपण वेदानुप्राणित है—

अर्वाची सुभगे भव सीते! वन्दामहे त्वा ।
यथा नः सुभगाससि यथा नः सुफलाससि ।[27] ऋ. 4.57.6*

सरसता की अधिष्ठात्री देवी सरस्वती का मातृरूप नदी रूप और देवता रूप वेदोपवीर्णत है। आश्वलायन कृत दशश्लोकी में

अम्बितमे नदीतमे देवितमे सरस्वति ।
अप्रशस्ता इव स्मसि प्रशस्तिमम्ब नस्कृधि ।।[28]

वाक्सूक्त, मेधा सूक्त तथा परा और अपरा विद्या के रूप में सरस्वती की स्थापना वैदिक चिन्तनधारा में स्वत: दृश्यमान है।[29] वेदों से स्तोत्र साहित्य तक भगवती वागीश्वरी का गुणगान अजस्र हो रहा है। इसी प्रकार वेदमाता गायत्री, तारा रहस्य, दशमहाविद्यायें तथा शक्ति के महाकाली, महालक्ष्मी और महासरस्वती स्वरूप निगमागम सम्मत हैं जिनकी उपासना स्तुति गीतों से भारतीय जनमानस सदा से करता आया है।

अर्वाचीन साहित्य में **रक्षत गङ्गाम्** महाकाव्य का आध्यात्मिक सर्ग वेदानुप्राणित है। जो तत्त्व वेदों को भी ज्ञात नहीं, व्यापक निर्गुण निर्विकार जिस तत्त्व को श्रुतियां नेति नेति कहती हैं वही निराकार रूप में परिणत हुआ ब्रह्म द्रव श्रीगङ्गा की पावन धारा है।[30] अखिल ब्रह्माण्ड के अधिष्ठान चैतन्य विष्णु अर्थात् व्यापनशील परब्रह्म का द्रवीभाव श्रीगङ्गा है। यही विष्णु सावच्छिन होकर (मायोपहित ईश्वर के रूप में) ज्ञान, इच्छा, क्रियारूपी तीन पदों से त्रिलोकी को नापते हैं। उनके चिन्मय चरणों में संचरण करने वाली चित्शक्ति ही गङ्गा है।[31] इस प्रकार 'विष्णो: पदे परमे मध्व उत्स:'[32] ऋचा के प्रतीक को अच्युतचरणतरङ्गिणी गङ्गा के संदर्भ में व्याख्यायित किया गया है। अतएव स्पष्ट है कि वेदोक्त निराकार चिति ही नीराकार रूप में प्रकट हुई है।

चिदानन्दासंविद् भवभयविनाशेऽतिचतुरा
निराकारा नित्या श्रुतिभिरनभिज्ञातविषया ।
नराकारा भूत्वाऽवतरति कदाचिद् भुवि परा
तथा नीराकारा सरसरसधारा विजयते ।। (रक्षत गङ्गाम् 9.34)

इस प्रकार स्पष्ट है कि वेदों का निराकार पुञ्जीभूत सौन्दर्य साकार हो उठा है शक्ति के स्तोत्रों में। इस सनातन तत्त्व की सुवास को स्त्रीतत्त्व में रचा बसाकर भारतीय चिन्तकों ने जिस जीवन धारा को जीवन्त बनाया है वह माननीय है।

विद्या: समस्तास्तव देवि भेदा:
स्त्रिय: समस्ता: सकला जगत्सु ।

---

* यह सन्दर्भ हलकर्षण से युक्त पृथ्वी (सीता) के लिए है। (सम्पादक)

त्वयैकया पूरितमम्ब! एतत्
का ते स्तुतिः स्तव्यपर परोक्तिः ॥[33]

इन कृतज्ञ वचनों में क्रान्त द्रष्टा कवि ने सर्वत्र मातृशक्ति के दर्शन किये हैं। इसी अनुचिन्तन ने भारत राष्ट्र को मातृभूमि का आदर दिया। राष्ट्र की भौगोलिक सीमा माता के रूप में परिकल्पित हुई। हिमगिरि के शुभ्र मुकुट, कच्छ से कामरूप तक फैली भुजायें, सितकान्ति धाराओं की हारावली से मण्डित हृदय मां की तरल करुणा से युक्त है। शस्य-श्यामला के चरणों को पखारता सागर उल्लास से उर्मिल हो उठा है। वेदों की यह आत्मिक चेतना भारत को भा-रत बना रही है। इस चिन्मयी का प्रकाश सर्वत्र है; कण-कण में है, जन-जन में है, प्रति मन में है। तभी तो भारतीय नारी का स्वर गूंज उठा है दिङ्ण्डल में—

विमलवारि-वाहिनी त्रिपथगा-तरङ्गिणी
जीवन-प्रदायिनी पुष्टितुष्टि-कारिणी
धराऽहं धाराऽहं वसुधा वसुमाताऽहम्
जागृता प्रबुद्धेषु राष्ट्रचेतनामयी ।
सूक्तेषु प्रोक्ता 'ऽहं राष्ट्री सङ्गमनीति'
'वन्दे मातरं' मन्त्रशक्तिरूपिणी ॥
आत्मस्वरूपाऽहं नारीति प्रोक्ताऽहम्
महिलेति ख्याताऽहं स्त्री शब्द वाच्याऽहम् । आत्मस्वरूपाऽहम् ॥[34]

सन्दर्भिका

1. कल्याण शक्त्यङ्क से संकलित
2. अदिति सूक्त ऋ० 1.92.113
3. अथर्ववेद 4.30.1-2
4. अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चरामि, अहमादित्यैरुत विश्व देवैः।
   अहं मित्रावरुणावुभौ विभर्मि, अहमिन्द्राग्नी अहमश्विनोभा। ऋ. 10.125.1
5. अहं राष्ट्री सङ्गमनी वसूनां चिकितुषी प्रथमा यज्ञियानाम्। ऋ. 10.125.3
   अहं सुवे पितरमस्य मूर्धन्मम योनिरप्स्वनन्तः समुद्रे।। ऋ. 10.125.7
6. द्र० ऐतरेय उप० 1.1, वृहदारण्यक उप. 1.2 अं.ब्रा. 1
7. पराऽस्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते। स्वाभाविकी ज्ञान-बल-क्रिया च । श्वेता० 6.8
8. छा० उप० मधुविद्या अ० 3
9. अभिनवगुप्त कृत अम्बास्तव
10. सौन्दर्य लहरी 44
11. आनन्द लहरी 8
12. वही 9
13. गंगा लहरी 4
14. देव्यपराध क्षमा स्तोत्र 11
15. वही 4
16. घटस्तव-1
17. रक्षत गंगाम् 8.66
18. गङ्गा दण्डकम्
19. शङ्कराचार्य कृत गङ्गास्तोत्र 2
20. ,, गङ्गाष्टकम् 8
21. ,, नर्मदाष्टकम् 4
22. कनक धारा स्तोत्र 15 श्री सूक्त 24
23. मीनाक्षी स्तोत्र 3
24. त्रिपुरसुन्दरी वेदपाद स्तोत्र 12
25. हितहरिवंश
26. गीतगोविन्द 10.7
27. ऋ० 4.57.6
28. ऋ० 2.41.16
29. द्वे विद्ये वेदितव्ये.....परा चैवापरा च । मु० 1.1.4
30. रक्षत गङ्गाम् 9.4
31. वही 9.8
32. ऋ 1.154.5
33. दुर्गासप्तशती-अ० 11 श्लो० 6
34. नारी-स्वरचित कविता-'त्रिस्कन्ध ज्योतिषम्'।